आशीष और शाप की सार्थकता

ललित बिहारी गोस्वामी*

शब्द-चर्चा करनी हो तो एक बार कोश (विशेषतः संस्कृत कोश) खोलकर अवश्य झाँक लेना चाहिए। शब्द, मूल धातु, उसका अर्थ, फिर उसके विभिन्न अर्थ, जो अनेक बार एक दूसरे के विरोधी भी हो सकते हैं और उनमें से बहुत तो प्रचलन अथवा व्यवहार में नहीं भी हो सकते हैं, फिर उपसर्ग लगने से परिवर्तित हो जाने वाले अथवा विविध छवियाँ धारण कर लेने वाले अर्थ, सारतः शब्दार्थ का एक विशाल साम्राज्य हमारे सामने प्रस्तुत हो जाता है। उच्चारण-भेद से शब्द का रूप परिवर्तित होता है तो अर्थ संचरण करते हुए अर्थ-संकोच, अर्थविस्तार, अर्थोत्कर्ष, अर्थापकर्ष और अर्थ परिवर्तन को प्राप्त करता है। रससिद्ध कवीश्वरों के हाथ पड़कर तो अर्थ की विच्छिति, भंगिमा एक निराली ही 'धज' प्राप्त करती है, रसिक हृदय पाठक अद्भुत आनन्द प्राप्त करता है। इस अर्थयात्रा का साक्षात्कार वास्तव में विलक्षण है।

'आशीष और शाप की सार्थकता' पर लिखने के लिए जब मुझे आदेश मिला तो सर्वप्रथम मैंने श्री वामन शिवराम आप्टे के संस्कृत हिन्दी कोश का आश्रय लिया। आशीष और शाप इन दोनों को ठीक से समझूँ तो।

कोश में आशिष् (आ + शास् + क्विप्) का अर्थ है- आशीर्वाद, मंगलकामना। आशी शब्द का भी यही अर्थ है। वहीं इसकी परिभाषा भी दी गई है-

वात्सल्याद्यत्र मान्येन कनिष्ठस्यामिधीयते।
इष्टावधारकं वाक्यमाशीः सा परिकीर्तिता।।

वहाँ आशीर्वाद तथा वरदान को भिन्नार्थक मानते हुए लिखा गया है ''आशीर्वाद तो केवल किसी की मंगलकामना या सद्भावना की अभिव्यक्ति है- वह चाहे पूरी हो या न हो, इसके विपरीत वर शब्द की भावना अधिक स्थायी और पूर्णता की निश्चायक है।'' शकुन्तला नाटक में कहा भी गया है- 'वरं खल्वेष नाशीः'।

आशिस् या आशी के अन्य अर्थों में प्रार्थना, चाह, इच्छा एवं साँप का विषैला दाँत (आशीर्विषः) भी हैं।

वरदान ईश्वरीय है। साधना से प्रसन्न हो अवतार लेकर भक्त ध्रुव, प्रह्लाद आदि को उन्होंने वरदान माँगने को कहा। भक्ति के अतिरिक्त भक्त कुछ चाहता नहीं। मानस में गौतम नारी के मार्मिक प्रसंग में श्रीराम से वह वरदान में भक्ति ही चाहती है-

बिनती प्रभु मोरी मैं मति भोरी नाथ न मागउँ बर आना।
पद कमल परागा रस अनुरागा मम मन मधुप करै पाना।।

मानस में ही एक और बड़ा मार्मिक प्रसंग है। जब श्री भरत जी श्री राम को अयोध्या वापस लौटा लाने के लिए मार्ग में प्रयागराज पहुँचते हैं तब वे 'राम चरन रति' के वरदान की ही याचना करते हैं-

* सेवानिवृत्त एसोसिएट प्रोफेसर
पी.जी.डी.ए.वी कॉलेजस्, दिल्ली विश्वविद्यालय।

अरथ न धरम न काम रुचि गति न चहउँ निरबान।
जनम जनम रति राम पद यह बरदानु न आन।।

आशीष ईश्वरीय तो है ही, गुरुजनों द्वारा भी मंगलाकांक्षा के रूप में दिया जाता है। मानस का अत्यंत रसमय प्रसंग है सीता गौरी - पूजन के लिए जाती हैं। देवी से कहती हैं- ''मोर मनोरथ जानहु नीकें।'' माता भवानी उत्तर देती हैं-

''सुनु सिय सत्य आसीस हमारी।
पूजिहि मन कामना तुम्हारी।।''

परिणाम में-

''एहि भाँति गौरि असीस सुनि सिय सहित हियँ हरषीं अली।''

इसी प्रकार सीता जी भी रामप्रिय हनुमान् जी को आशीष देती हैं- **''आसिस दीन्ह रामप्रिय जाना।''**

रामकार्य के लिए जाने वाले हनुमान् जी को, बल और बुद्धि की परीक्षा लेने के बाद, सुरसा आशीष देती है-

''आसिष देह गई सो, हरषि चलेउ हनुमान।''

ऐसे अनेक प्रसंग भारतीय साहित्य में भरे पड़े हैं। आशीर्वाद का परिणाम हर्ष है। मन प्रसन्न होता है, मन भरा-भरा लगता है, मन बड़ा हल्का हो जाता है और मन में अपने सद्उद्देश्य की पूर्ति का विश्वास जागता है। फिर नकारात्मकता संदेह, संशय, अविश्वास दूर-दूर तक दिखाई नहीं देते। श्रद्धा और विश्वास की स्थापना मन में होती है अर्थात् मन में ईश्वर का वास होता है। श्रद्धा, विश्वास ही तो भवानी शंकर हैं-

''भवानीशंकरौ वंदे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ।''

शुभता से भरा ऐसा मन मनुष्य जीवन की सबसे बड़ी सार्थकता है, ऐसी आधुनिक मनोविज्ञान की भी मान्यता है।

कोश में शाप (शप् + छाञ्) का अर्थ है- अभिशाप, अवक्रोश, फटकार। अन्य अर्थ हैं- सौगंध, शपथोक्ति, दुर्वचन, मिथ्या आरोप।

शाप में अस्त्र शब्द जोड़कर शाप को ही जिसने अपना आयुध बनाया है ऐसे ऋषि, उत्सर्ग और उद्धार, मुक्ति, मोक्ष जैसे शब्द जोड़कर शाप से छुटकारा एवं यंत्रित शब्द जोड़ें तो अभिशाप के कारण नियंत्रणपूर्ण जीवन जीने वाला अर्थ निष्पन्न होता है।

शाप के भी अनेक प्रसंग साहित्य में मिलेंगे। शाप देने के भी अनेक कारण हैं। इनमें से एक छल और इसके कारण हुआ क्रोध है। जलंधर की पत्नी के साथ जब विष्णु ने छल किया तब वह शाप देती है-

''छल करि टारेउ तासु व्रत प्रभु सुर कारज कीन्ह।
जब तेहिं जानउ भरम तब श्राप कोप करि दीन्ह।।''

शाप के पीछे क्रोध, काम, ईर्ष्या, कपट, अहंकार आदि दुर्गुण ही होते हैं। कामपीड़ित नारद सुंदर रूप चाहते हैं, जिससे स्वयंवर में उन्हें वर चुना जा सके। अपेक्षित इच्छा पूरी न होने पर क्रोध आता है-

"फरकत अधर कोप मन माहीं।
सपदि चले कमलापति पाहीं।।"
"बंचेउ मोहि जवनि धरि देहा।
सोइ तनु धरहु श्राप मम एहा।।"

जामदग्नि परशुराम और महर्षि दुर्वासा तो शाप देने के लिए प्रसिद्ध ही हैं। दोनों का कारण क्रोध है, वह भी छोटी-छोटी बातों पर। शकुंतला प्रिय दुष्यंत के ध्यान में बैठी दुर्वासा का आगमन नहीं जान पाती। उठकर प्रणाम न करने से ही दुर्वासा का अहंकार आहत हो जाता है। क्रोध में भरकर शाप दे बैठते हैं। 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' में यद्यपि यह घटना कथा को अप्रितम मोड़ और गति देती है, उसे आगे बढ़ाती है।

परशुराम का क्रोध तो सीता स्वयंवर प्रसंग में सबने देखा ही। मानस के बहुत चर्चित प्रसंगों में से एक यह प्रसंग तुलसी की काव्यमयी कल्पनाशीलता का बड़ा अच्छा उदाहरण है। 'दिनकर' ने तो परशुराम के परिचय में शाप को परशुराम का संबल ही लिख दिया है-

"शाप और शर दोनों ही थे, उस महान् ऋषि के संबल"। "अपनी पत्नी अहल्या को ही वे उपलदेह धारण करने का शाप दे बैठे।" वास्तव में तो क्रोध का जनक अहंकार है और पुत्र शाप। ये कामक्रोधादि मन को मैला करते हैं, सदसद्विवेकिनी बुद्धि का नाश करते हैं और अंततः अपनी स्वयं की हानि करते हैं। क्रोध बड़े-बड़े ऋषियों की तपहानि करता है, उन्हें साधना से च्युत करता है। "क्रोधः सुदुर्जयः शत्रुः" यह कहा गया लेकिन इस पर विजय प्राप्त कर स्थिरचित्त व्यक्ति ही ऋषिपद का अधिकारी बनता है। क्रोध को जीत लेने पर ही राजर्षि विश्वामित्र ब्रह्मर्षि विशेषण प्राप्त कर सके। अचंचल जल में ही अपने रूप को और अचंचल मन में ही अपने स्वरूप को देखा जा सकता है। तभी वास्तव में साक्षात्कार होता है।

शाप निरर्थक ही है, ऐसा नहीं। एक और दृष्टि, सकारात्मक दृष्टि से देखें तो इसकी सार्थकता भी ध्यान में आती है। मोह के कारण नारद द्वारा दिया गया शाप रामावतार के कारणों में से एक कारण गिनाया जाता ही है। उपलदेहधारी गौतम नारी मुनि शाप को अति भला कहती हैं, जिसने श्रीराम का दर्शन कराया-

"मुनि श्राप जो दीन्हा अति भल कीन्हा परम अनुग्रह मैं माना।
देखेउँ भरि लोचन हरि भवमोचन इहइ लाभ संकर जाना।।"

आशीष प्रसन्न, तृप्त और आप्त मन की सृष्टि है तो शाप अतृप्त, कुण्ठित, विकारी मन से उपजता है। आशीर्वाद वातावरण को और आंतरिक मन को सात्विक बनाता है तो शाप मन और परिवेश को बोझिल। लेकिन यह भी सत्य है कि आत्मदर्शन से त्रुटियों को दूर करते हुए आचरण करने एवं प्रभुकृपा का अनुभव करने से शाप भी अंततः फलदायी हो सकता है, कालांतर में आशीष में परिणत हो सकता है, सुखद और सार्थक हो सकता है।

❑❑❑❑